

बलदेव सिंह

बनाम

भारत संघ और अन्य

28 अक्टूबर, 2005

[अरिजीत पसायत, न्यायाधीश और सी. के. ठाकर, न्यायाधीश]

सेवा कानून:

वेतन और पेंशन-का अनुदान-दोषी ठहराए जाने पर कर्मचारी की बर्खास्तगी और बाद में बरी होना-वेतन और पेंशन देने के लिए सेवा की गणना के लिए प्रभाव-उस अभिरक्षा अवधि को इस तरह लेने की याचिका जैसे कि कर्मचारी ड्यूटी पर था।

अभिनिर्धारित:

केवल बरी होने से कर्मचारी को स्वतः ही अभिरक्षा अवधि के लिए वेतन प्राप्त करने का अधिकार नहीं होता है क्योंकि कर्मचारी वास्तविक सेवा में नहीं था-साथ ही कर्मचारी पेंशन का हकदार नहीं है क्योंकि सेवा प्रदान नहीं करने के लिए अभिरक्षा अवधि को शामिल नहीं करने पर, प्रदान की गई सेवा 15 वर्ष से कम थी।

भारतीय सेना में नामांकित अपीलार्थी को दंड संहिता, 1860 के तहत दोषसिद्धि के कारण सेवाओं से बर्खास्त कर दिया गया था। हालांकि, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को बरी कर दिया। उसके बाद अपीलार्थी ने अपनी गिरफ्तारी की तारीख से सेवा से मुक्ति की तारीख

तक वेतन के बकाया राशि और पेंशन देने का अनुरोध करते हुए रिट याचिका दायर की। उसने यह भी कहा कि बरी होने के आदेश के बाद उसे जेल से रिहा कर दिया गया और उसके संदर्भ में उसे सेवा में बहाल कर दिया गया। और वह सेवाओं से मुक्त होने तक सेवा में बना रहा- प्रतिवादी- भारत संघ ने तर्क दिया कि सेवा में बहाली का निर्देश बरी होने के आधार पर पारित किया गया था, लेकिन बार-बार अनुरोध और अनुस्मारक के बावजूद अपीलार्थी सेवा में फिर से शामिल नहीं हुआ, इस तरह वेतन के बकाया के लिए उसका दावा संधारणीय नहीं था। उच्च न्यायालय ने माना कि अपीलार्थी उस अवधि के लिए वेतन का हकदार था जिसमें उसने वास्तविक रूप से सेवाएँ दी और उस अवधि के लिए नहीं जब वह विचारण के लिए हिरासत में था और उसने काम नहीं किया , और इस तरह दी गई सेवाएँ आवश्यक न्यूनतम अवधि से कम होने से वह पेंशन का हकदार नहीं है। इसलिए वर्तमान अपील दायर की गई है।

अपीलार्थी ने तर्क दिया कि जारी किए गए प्रमाण पत्र में स्पष्ट रूप से उनकी सेवा की अवधि 15 वर्ष और 18 दिनों के रूप में दिखाई गई थी और इस तरह वह पेंशन का हकदार था; कि बरी करने के आदेश का स्वाभाविक परिणाम यह था कि- अभिरक्षा की अवधि को ऐसा माना जाना था जैसे कि वह ड्यूटी पर था और इस तरह से

बर्खास्तगी आदेश का अस्तित्व शून्य था; और यह कि अधिकारी परिणामी राहत देने के लिए सरकार की मंजूरी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

याचिका खारिज करते हुए, न्यायालय ने कहा:

1.1. तथ्य स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि अपीलकर्ता उस अवधि के लिए वास्तविक सेवा में नहीं था जब वह अभिरक्षा में था। सिर्फ इसलिए कि वह बरी हो गया है, वह स्वयमेव रूप से संबंधित अवधि के लिए वेतन प्राप्त करने का हकदार नहीं होता है। ऐसा उस तर्क के आधार पर भी है कि काम नहीं तो वेतन नहीं। अपीलार्थी की सेवा को दोषसिद्धि के आधार पर समाप्त कर दिया गया था। क्योंकि सेवा गणना के उद्देश्य से बाद में बरी होने से उसका प्रभाव कमजोर नहीं हो जाता।

रणछोड़जी चतुरजी ठाकुर बनाम अधीक्षण अभियंता, गुजरात विद्युत बोर्ड, हिम्मतनगर (गुजरात) और अन्य, (1996- 11 एस. सी. 603) और भारत संघ और अन्य बनाम जयपाल सिंह, (2004-1 एस. सी. सी. 121) पर भरोसा किया।

1.2. कार्यवाहक मुख्य अभिलेख अधिकारी के पत्र में केवल यह कहा गया है कि स्वीकार्य दावों और बकाया का निपटान केवल तभी किया जाएगा जब नियमितीकरण के लिए सरकार की मंजूरी प्रपट हो जाएगी। अपीलार्थी की हकदारी की कहीं कोई स्वीकृति नहीं थी। किसी भी सूरत में, चूंकि अपीलार्थी ने कोई सेवा प्रदान नहीं की है, अभिरक्षा की अवधि को सेवा गणना में शामिल नहीं किया जा सकता है, और इस प्रकार

अपीलार्थी ने पेंशन का हकदार होने के लिए 15 वर्ष की अपेक्षित सेवा अवधि प्रदान नहीं की है। इसलिए उच्च न्यायालय का आदेश किसी भी दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है। [965-ई, एफ, जी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल अपील सं. 3892/1999

(सी. डब्ल्यू. पी. सं. 19083/ 1997 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांकित 16.7.98 से)

अपीलार्थी की ओर से भीम सेन सहगल और अविजीत भट्टाचार्जी।

उत्तरदाताओं की ओर से सुश्री अनिल कटियार और अरविंद कुमार शर्मा।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधीश अरिजीत पसायत द्वारा दिया गया था।

अपीलार्थी ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की खंड पीठ के उस निर्णय की वैधता पर सवाल उठाया है जिसमें उसके द्वारा भारत के संविधान, 1950 (संक्षेप में संविधान) के अनुच्छेद 226 के तहत वेतन और पेंशन के बकाया के लिए दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया।

इसकी तथ्यात्मक पृष्ठभूमि इस प्रकार है:

अपीलार्थी को 13 सितंबर, 1978 को भारतीय सेना में नामांकित किया गया था। 30 मार्च, 1987 को उन्हें भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में 'आई. पी. सी.') की धाराओं 302/34 और 452 के तहत दंडनीय अपराध के लिए एक आपराधिक मामले में गिरफ्तार किया गया था। अपीलार्थी को विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया था। हालांकि, उनकी अपील को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और उन्हें 26 मार्च, 1992 के आदेश से बरी कर दिया गया था। अपीलार्थी का आरोप है कि उन्हें 4 अप्रैल, 1992 को जेल से रिहा किया गया था और उन्होंने फैसले की एक प्रति के साथ अगले दिन अपनी इकाई को सूचित किया था।

उन्होंने आगे कहा कि उन्हें इस तरह बरी किए जाने के आधार पर बहाल किया गया और सेवा में बने रहे, लेकिन उनका वेतन और भत्ते ना तो तय किए गए ना ही जारी किए गए। 30 सितंबर, 1993 को उन्हें सेवा मुक्त किया गया। उनका दावा है कि उन्होंने नामांकन की तारीख से सेवा मुक्त होने की तारीख तक सेवा की अपेक्षित अवधि पूरी की है और 30 मार्च, 1987 से 30 सितंबर, 1993 तक की अवधि के लिए वेतन के बकाया जारी करने और उसके बाद की अवधि के लिए पेंशन का हकदार होने का दावा किया।

प्रतिवादियों ने अपीलार्थी के दावे का विरोध किया। यह कहा गया कि आपराधिक मामले में दोषी ठहराए जाने के बाद अपीलार्थी को 18 जुलाई, 1990 से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। यह अभिकथन कि अपीलार्थी ने 5 अप्रैल, 1992 को इकाई में ड्यूटी के लिए सूचना दी थी, से भी इन्कार कर दिया गया। विशेष रूप से यह कहा गया था कि उसने कई बार याद दिलाने के बावजूद ड्यूटी पर रिपोर्ट नहीं किया था। यह भी बताया गया था कि अदालत द्वारा अपीलार्थी के बरी होने के बाद, सेना मुख्यालय ने 18 अगस्त, 1993 के पत्र के माध्यम से निर्देश दिया था कि उसे सेवा में बहाल किया जाये। 18 जुलाई, 1998 से अपीलार्थी की बहाली के लिए आदेश जारी किए गए। इस आदेश की प्राप्ति के बाद अपीलार्थी को उसकी मूल इकाई द्वारा बार-बार सलाह दी गई थी कि वह तुरंत फिर से ड्यूटी पर आ जाये।

अपने कथन के समर्थन में प्रतिवादियों ने 6 सितंबर, 1993 और 9 सितंबर, 1993 के पत्रों को अभिलेख पर रखा। जब अपीलार्थी ने इन पत्रों की कोई प्रतिक्रिया नहीं दी तो उन्हें सेवा में शामिल होने के लिए एक कूरियर भेजा गया। इन सब के बावजूद अपीलार्थी कभी ड्यूटी पर नहीं आया। तदनुसार, उसे सेवा 30 सितंबर 1993 (अपराहन) से प्रभावी दिनांक से बर्खास्त कर दिया गया। इसके आगे, यह इंगित किया गया कि बार-बार अनुरोध के बावजूद अपीलार्थी के फिर से ड्यूटी पर आने में विफल रहने से लेखा परीक्षा अधिकारियों ने 30 मार्च, 1987 से 30

सितंबर, 1993 तक की अवधि के वेतन की स्वीकृती के लिए आपत्ति जताई। इस मामले को भारत सरकार को भेजा गया। लेखा परीक्षा अधिकारियों ने विभिन्न टिप्पणियों के साथ दस्तावेजों को वापस कर दिया और अपीलर्थी द्वारा ड्यूटी पर न आने के कारणों के बारे में पूछा। आगे यह भी देखा गया कि जब अपीलकर्ता ने नौ पत्र जारी होने के बावजूद और किसी व्यक्ति को उसके घर भेजने के बाद भी ड्यूटी के लिए रिपोर्ट नहीं किया, तो यह महसूस किया गया कि इस मामले में सरकार कि अनुमति प्राप्त करके नियमितीकरण के लिए विचार करने की आवश्यकता नहीं है। इस आधार पर प्रतिवादियों ने प्रार्थना की कि वेतन आदि जारी करने के लिए अपीलार्थी के दावे को खारिज कर दिया जाए।

उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभिलेख की सामग्री से यह स्पष्ट था कि कई प्रयासों के बावजूद रिट-याचिकाकर्ता ने ड्यूटी पर आने से परहेज किया और उसके आचरण ने केवल वेतन के बकाया और पेंशन प्राप्त करने के लिए एक स्पष्ट उद्देश्य स्थापित किया। यह अभिनिर्धारित किया गया कि वह उस अवधि के लिए वेतन का हकदार था जिसके लिए रिट याचिकाकर्ता ने वास्तव में सेवा प्रदान की थी और उससे पहले के लिए नहीं। वह उस अवधि के लिए वेतन प्राप्त करने का हकदार है जब उसने वास्तव में काम किया था या काम करने कि पेशकश की। स्वीकृत स्थिति यह थी कि अपीलकर्ता ने 30 मार्च,

1987 से 30 सितंबर, 1993 की अवधि के दौरान न तो काम किया था और न ही काम करने की पेशकश की थी। वास्तव में, वह मार्च, 1992 तक मुकदमे का सामना करते हुए अभिरक्षा में था। उन्होंने सितंबर 1978 और मार्च 1987 के अंत तक सेवा प्रदान की थी। उन्होंने वास्तविक पंद्रह साल की सेवा पूरी नहीं की थी और इसलिए पेंशन के हकदार नहीं थे। अतिरिक्त रूप से यह निवेदन किया गया था कि सेवा मुक्ति की तारीख 30 सितंबर, 1993 थी और रिट याचिका 22 दिसंबर, 1997 को दायर की गई थी और काफी देर हो गई थी। वेतन के बकाया भुगतान के लिए मुकदमे को भी परिसीमा द्वारा अवरुद्ध किया जा सकता है। तदनुसार, रिट याचिका खारिज कर दी गई थी।

अपील के समर्थन में, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने निवेदन किया कि अपीलार्थी को जारी किया गया प्रमाण पत्र स्पष्ट रूप से दिखाता है कि उसकी सेवा की अवधि 15 वर्ष और 18 दिन है और एक आपराधिक मामले में बरी होने का प्रभाव समाप्त नहीं किया जा सकता है और उस कार्यवाही के कारण जो बरी होने में समाप्त हुई, अपीलार्थी इयूटि पर उपस्थित होने में असमर्थ था। जब मूल रूप से दर्ज की गई दोषसिद्धि को दरकिनार कर दिया गया था, उसका प्रभाव यह होता है कि कानून कि नजर में कोई कार्यवाही नहीं थी। बर्खास्तगी 18 जुलाई, 1990 के दोषसिद्धि के आदेश के परिणामस्वरूप हुई थी। वह 9 अप्रैल, 1987 से 16 अगस्त, 1988 तक हिरासत में थे। निचली अदालत द्वारा

दोषसिद्धि के खिलाफ, उन्होंने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील दायर की, जिसको अनुमति दी गई। लेकिन इस बीच, उनकी दोषसिद्धि के कारण उन्हें सेना के लिए विनियमन 1987 (संक्षेप में 'विनियमन') के अनुच्छेद 423 के संदर्भ में बर्खास्त कर दिया गया था। अपीलार्थी के अनुसार, बरी करने के आदेश का स्वाभाविक परिणाम यह है कि हिरासत की अवधि को ऐसा माना जाना चाहिए जैसे कि वह ड्यूटी पर था और बर्खास्तगी का आदेश शून्य है।

प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय के फैसले का समर्थन किया।

जैसा कि उल्लिखित तथ्यात्मक स्थिति स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि अपीलार्थी अभिरक्षा की अवधि में वास्तविक सेवा नहीं था। सिर्फ इसलिए की वह बरी हो गया स्वयमेव रूप से संबन्धित अवधि का वेतन पाने का हकदार नहीं हो जाता। ऐसा उस तर्क के आधार पर भी कि काम नहीं तो वेतन नहीं। यह ध्यान देने योग्य है कि अपीलार्थी की सेवा को दोषसिद्धि के आधार पर समाप्त कर दिया गया था। क्योंकि सेवा गणना के उद्देश्य से बाद में बरी होने से उसका प्रभाव कमजोर नहीं हो जाता ।

उपरोक्त स्थिति को रणछोड़जी चतुरजी ठाकुर बनाम अधीक्षण अभियंता, गुजरात विद्युत बोर्ड, हिम्मतनगर (गुजरात) और अन्य, (1996- 11 एस. सी. 603) में स्पष्ट रूप से बताया गया है।

इस स्थिति को भारत संघ और अन्य बनाम जयपाल सिंह, (2004-1 एस. सी. सी. 121) में दोहराया गया है।

अपीलार्थी के विद्वान वकील ने आगे बताया कि अधिकारी परिणामी राहत देने के लिए सरकार की मंजूरी की प्रतीक्षा कर रहे थे। इस संबंध में कुछ दस्तावेजों के का संदर्भ दिया गया है, विशेष रूप से, कमांडिंग ऑफिसर के लिए कार्यवाहक मुख्य रिकॉर्ड अधिकारी के पत्र दिनांकित 4.12.1996 का। पत्र के सरसरी अवलोकन से पता चलता है कि कहीं भी यह संकेत नहीं दिया गया था कि अपीलार्थी को उस अवधि के लिए भुगतान किया जाना था जब वह इयूटि से अनुपस्थित था। उसमें केवल यह कहा गया था कि स्वीकार्य दावों और बकाया का निपटान सरकारी मंजूरी के बाद किया जाएगा। केवल यही एक संकेत था कि नियमित करने के लिए सरकारी मंजूरी प्राप्त होने के बाद ही दावे का निपटारा किया जाएगा।

कहीं भी अपीलकर्ता के दावों की स्वीकारोक्ति नहीं की गई। किसी भी स्थिति में चूंकि अपीलार्थी ने सेवा प्रदान नहीं की है, अवधि को शामिल करने का सवाल नहीं उठता है और यदि उक्त अवधि को बाहर रखा जाता है तो अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि अपीलार्थी ने पेंशन के हकदार होने के लिए अपेक्षित अवधि यानी 15 वर्ष की सेवा प्रदान नहीं की है।

किसी भी दृष्टिकोण से देखें तो उच्च न्यायालय का आदेश कोई भी दुर्बलता से ग्रसित नहीं है।

अपील खारिज किए जाने के योग्य है, जो हम निर्देशित करते हैं।
हर्जा खर्चा आसान किया गया ।

एन. जे.

याचिका खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय वादी के प्रतिबंधित उपयोग के लिए उसकी भाषा में समझाने के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।